मैत्रावरुणर्वसिष्ठः।विष्णुः। त्रिष्टुप्।

**नू मर्तो दयते सनिष्यन्यो विष्णव उरुगायाय दाशत्।**
**प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नर्यमाविवासात्॥ ७.१००.०१**

यः। उरुगायाय- विस्तृतया कीर्तितव्याय। विष्णवे- सर्वव्यापिने अन्तर्यामिणे। दाशत्- दद्यात्। सः। मर्तः- मर्त्यः। सनिष्यन्- सम्भक्तुमिच्छन्। दयते- सम्पदमादत्ते। यः। सत्राचा- सहाञ्चता। मनसा। प्र- प्रकर्षेण। यजाते- यजते। एतावन्तम्- ईदृशम्। नर्यं- नरहितम्। आविवासात्- परिचरेत्। ॥१॥

**त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्यामप्रयुतामेवयावो मतिं दाः।**
**पर्चो यथा नः सुवितस्य भूरेरश्वावतः पुरुश्चन्द्रस्य रायः॥ ७.१००.०२**

एवयावः- हे कामप्रापक। एवाः प्राप्तव्याः कामाः। तान् यापयतीति एवयावा। विष्णो। त्वम्। अप्रयुताम्- दोषरहिताम्। विश्वजन्याम्- सर्वभूतहितकरीम्। सुमतिम्- शोभनमननयुक्ताम्। मतिम्। दाः- यच्छ। नः- अस्मभ्यम्। सुवितस्य- सुखकरस्य। भूरेः- प्रभूतस्य। अश्वावतः- प्राणतुरगयुक्तस्य। पुरुश्चन्द्रस्य- बह्वाह्लादकस्य। रायः- धनस्य। पर्चः- सम्पर्कः। यथा भवति तथा यच्छ ॥२॥

**त्रिर्देवः पृथिवीमेष एतां वि चक्रमे शतर्चसं महित्वा।**
**प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान्त्वेषं ह्यस्य स्थविरस्य नाम॥ ७.१००.०३**

देवः- द्योतकः। एषः- अयं विष्णुः। महित्वा- स्वमाहात्म्येन। शतर्चसम्- अनन्तप्रकाशाम्। पृथिवीम्- भूमिम्। त्रिः- त्रिधा। वि चक्रमे- विक्रान्तवान्। विष्णुः। तवसस्तवीयान्- प्रवृद्धेषु प्रवृद्धः। अस्तु- भवतु। अस्य- एतस्य। स्थविरस्य- प्रवृद्धस्य। नाम। त्वेषम्- दीप्तम् ॥३॥

Dr. Rangaji

WEBOLIM

**वि चक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्।**

**ध्रुवासो अस्य कीरयो जनास उरुक्षितिं सुजनिमा चकार॥ ७.१००.०४**

मनुषे- मनुष्याय। दशस्यन्- यच्छन्। क्षेत्राय- भूमिकाप्राप्त्यै। एताम्- इमाम्। पृथिवीम्- भूमिम्। विष्णुः। वि चक्रमे- विक्रान्तवान्। अस्य- एतस्य विष्णोः कल्याणगुणान्। कीरयः- कीर्तयन्तः। जनासः- जनाः। ध्रुवासः- नित्याः स्थिराः। सुजनिमा- सुष्ठ्वाविर्भूतः। उरुक्षितिम्- विस्तारभूमिकां स्वविक्रमेण। चकार- अकरोत्॥४॥

**प्र तत्ते अद्य शिपिविष्ट नामार्यः शंसामि वयुनानि विद्वान्।**

**तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान्क्षयन्तमस्य रजसः पराके॥ ७.१००.०५**

अद्य- इदानीम्। शिपिविष्ट- रश्मिभिराविष्ट। अर्यः- आर्यशीलः सन्। वयुनानि- प्रज्ञानानि। विद्वान्- जानन्। तत्। ते- तव। नाम। प्र शंसामि- कीर्तयामि। अस्य- एतस्य। रजस्य- प्रत्यक्षलोकस्य। पराके- परे चिदानन्दे। क्षयन्तम्- निवसन्तम्। तवसम्- प्रवृद्धम्। अतव्यान्- अवृद्धोहम्। तम्। त्वा- त्वाम्। गृणामि- स्तौमि॥५॥

**किमित्ते विष्णो परिचक्ष्यं भूत्प्र यद्ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि।**

**मा वर्पो अस्मदप गूह एतद्यदन्यरूपः समिथे बभूथ॥ ७.१००.०६**

यत्- यन्नाम। शिपिविष्टः- चिद्रश्मिभिराविष्टः। अन्तर्यामीति भावः। अस्मि- भवामि। इति। ववक्षे- वदसि। तत्। ते- तव। विष्णो। नाम। किम्। परिचक्ष्यम्- प्रख्यापनीयम्। किम्। यत्- यदा। अन्यरूपः- इतररूपेण। समिथे- अग्न्युपलक्षितप्रतीके। बभूथ- अभवः। तदा। एतत्- इदं चिन्मयं शिपिविष्टाख्यम्। वर्पः- रूपम्। अस्मत्- अस्मत्तः। मा। अप गूह- संवृतं कुरु। प्रतीकोपासनेपि चिन्मयरूपं माऽऽच्छादयेति भावः॥६॥

**वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।**

**वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ७.१००.०७**

Dr Ranganji

WEBOLIM

पूर्वं व्याख्यातम् (७.९९.७) ॥७ ॥

Dr. Ranganji

WEBOLIM